राजनैतिक मूल्यों के निर्माण में रामायण की भूमिका

डॉ0 उष्मा यादव
असिस्टेण्ट प्रोफेसर (संस्कृत)
काशी नरेश राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय,
ज्ञानपुर, भदोही –221304 (उ0प्र0)

आदिकवि वाल्मीकि कृत 'रामायण' में भारतीय संस्कृति का उदात्त स्वरूप दृष्टिगत होता है। मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र का व्यक्तित्त्व सदियों से मनुष्य को कर्त्तव्य एवं धर्म का पालन करते हुए आजीवन नैतिक बने रहने के लिए प्रेरित करता रहा है। यह ग्रन्थ जीवन के प्रत्येक क्षेत्र यथा– परिवार, समाज, राजनीति, धर्म इत्यादि में परमार्थ एवं सत्य की श्रेष्ठता को स्थापित करता है। रामायणयुगीन परिवार तथा समाज आदर्शवाद पर प्रतिष्ठत है, इसमें आदर्श पिता, पुत्र, भाई, पत्नी, माता, मित्रादि के चरित्र का भावपूर्ण वर्णन है जो मनुष्य को प्रत्येक परिस्थिति में नैतिक एवं न्यायप्रिय बने रहने का आत्मबल प्रदान करता है। इस महाकाव्य में राजनीतिशास्त्र का भी उत्तम निदर्शन मिलता है। 'राम राज्य की कल्पना' महर्षि वाल्मीकि की ही देन है।

किसी भी राष्ट्र की प्रगति में वहाँ की राजनैतिक व्यवस्था का महत्त्वपूर्ण योगदान होता है। शासन के संचालन हेतु विश्व में लोकतंत्र, राजतंत्र एवं कुलीनतंत्र ये तीन प्रकार की शासन प्रणालियाँ प्रचलित हैं। भारत एक लोकतान्त्रिक राष्ट्र है जहाँ जनता के चुने हुए प्रतिनिधि राष्ट्र की नीतियों का निर्धारण एवं संचालन करते हैं। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् संविधान निर्माताओं ने रामराजय की संकल्पना को साकार करने के लिए लोककल्याणकारी संविधान का निर्माण किया। किन्तु राजनैतिक दलों की स्वार्थपरता तथा संकीर्ण मानसिकता के कारण यह संकल्पना आज भी अमूर्त बनी हुई है। वर्तमान समय में जब सत्तारूढ़ दल निजी स्वार्थों की पूर्ति के लिए संविधान की नीतियों का अतिक्रमण करते हुए जनता के हितों की अनदेखी कर रहे हैं तब ऐसी परिस्थिति में रामायणयुगीन राजनैतिक मूल्य तथा पुरुषोत्तम राम द्वारा स्थापित राजा के कर्त्तव्यों की प्रासंगिकता स्वतः ही सिद्ध हो जाती है।

रामायण काल में राजतंत्रात्मक शासन प्रणाली का प्रचलन था। राजपद पैतृक होने के साथ ही दैवीय माना जाता था। रामायण में उल्लेख है कि ''राजा वास्तव में देवता है जो मनुष्यरूप में इस पृथ्वी पर विचरण करते हैं–

''देवा मानुषरूपेण रचन्त्येते महीतले।''[1]

राजा को उसके सद्गुणों, प्रजाहितैषी कार्यों एवं पराक्रम के कारण ही देवतुल्य माना जाता था। वाल्मीकि का मत है कि राजा सत्य और धर्म स्वरूप है, वह कुलवानों का कुल तथा माता–पिता है वह मनुष्यों का हितकारी है–

''राजा सत्यं च धर्मश्च राजा कुलवतां कुलम्।
राजा माता पिता चैव राजा हितकरो नृणाम्।।''[2]

राजा को उसके गुणों एवं चरित्र के कारण यम, कुबेर, इन्द्र तथा वरुण से भी बढ़कर माना गया है क्योंकि यमराज केवल दण्ड देते हैं, कुबेर धन प्रदान करते हैं, इन्द्र केवल पालन करते है तथा वरुण केवल सदाचार में नियन्त्रित करते हैं जबकि एक श्रेष्ठ राजा इन चारों गुणों से युक्त होता है।

''यमो वैश्रवणः शक्रो वरुणश्च महाबलः।
विशिष्यन्ते नरेन्द्रेण वृत्तेन महता ततः।।''[3]

यद्यपि राजा का पद पैतृक था किन्तु उसकी नियुक्ति में प्रजा की अनुमति परमावश्यक थी क्योंकि राजा का समस्त कार्य प्रजा के कल्याण से जुड़ा होता था। राजा दशरथ पुत्र श्रीराम को युवराज बनाते समय प्रजा की अनुमति प्राप्त करने की भावना से ही जनता एवं मन्त्रिमण्डल के समक्ष कहते है– ''मेरा यह प्रस्ताव आप लोगों को यदि अनुकूल प्रतीत हो तो आप इसके लिए मुझे अनुमति प्रदान करें, तथा इससे हितकर सम्मति प्रदान करें।''[4] तत्पश्चात् ब्राह्मण सेनापति एवं पुरवासियों ने उन्हें अपनी स्वीकृति प्रदान की।[5]

रामायण में राजा दशरथ तथा राम के लोककल्याणी कार्यों का विस्तृत चित्रण है। इनकी प्रजाहितकारी नीतियों के कारण ही राज्य में सर्वत्र सम्पन्ना एवं नैतिकता व्याप्त थी। महर्षि वाल्मीकि ने 'लोकरंजन कार्य' को राजा का प्रधान कर्त्तव्य माना है। वर्णाश्रम की रक्षा करना, बाह्य आक्रमणों एवं आन्तरिक विघ्नों को नष्ट कर नागरिकों को सुरक्षा प्रदान करना, न्याय–व्यवस्था की स्थापना करना, राज्य के कार्यों का सुचारू रूप से संचालन हो इसके लिए अनेक पदाधिकारियों की नियुक्ति तथा उनके कार्यों का निरीक्षण करना, आर्थिक कल्याण की व्यवस्था करना, सार्वजनिक कार्यों के देख–रेख की व्यवस्था करना इत्यादि राजा के लोककल्याणकारी कार्य हैं। रामायण के बालकाण्ड के छठें एवं सातवें सर्ग में राजा दशरथ के कार्यों का वर्णन है। नीतिपूर्वक राज्य का संचालन करने वाले राजा दशरथ के राज्य में निवास करने वाले सभी मनुष्य प्रसन्न, धर्मात्मा, बहुश्रुत, निर्लोभी, सत्यवादी तथा अपने–अपने धन से सन्तुष्ट रहने वाले थे–

तस्मिन् पुरवरे हृष्टा धर्मात्मानों बहुश्रुताः।
नरास्तुष्टा धनैः स्वैः स्वैरलुब्धाः सत्यवादिनः।।[6]

न्याय–व्यवस्था का सर्वोच्च अधिकारी राजा होता था। उसकी सहायता के लिए धर्म सभा होती थी जिसके अधिकारी जाति, देश, श्रेणी, कुल, धर्म एवं सदाचरणादि के ज्ञाता होते थे। न्याय करते समय राजा इनका परामर्श लेते थे। राजा का प्रमुख कर्त्तव्य दुष्टों का दमन करना था। वह अपने पराक्रम तथा न्याय दोनों के माध्यम से इस कर्त्तव्य का सम्पादन करता था। बालि का वध करके राम दुष्टों को दण्ड देने के व्यवहारिक रूप को चित्रित करते हैं।[7] राजा न्याय करते समय पूर्णतः तटस्थ रहते थे। राम द्वारा सीता का परित्याग इसका प्रमाण है।

राजा को परामर्श देने तथा शासन व्यवस्था के सम्यक् संचालन हेतु मंत्रि–परिषद् होती थी। इन मन्त्रियों को उनकी कुलीनता एवं योग्यता के आधार पर चयनित किया जाता था। मन्त्रियों के महत्त्व की ओर दृष्टिपात करते हुए राम भरत से कहते हैं– ''क्या तुमने अपने समान शूरवीर, शास्त्रज्ञ, जितेन्द्रिय, कुलीन तथा बाहरी चेष्टाओं से ही मन की बात जान लेने वाले सुयोग्य व्यक्तियों को ही मन्त्री बनाया है क्योंकि हे रघुनन्दन ! अच्छी मन्त्रणा ही राजाओं की विजय का मूल कारण है। वह भी तभी सफल होती है जब नीति–शास्त्रनिपुण मन्त्री उसे सर्वथा गुप्त रखे''–

''कच्चिदात्मसमाः शूराः श्रुतवन्तो जितेन्द्रियाः।
कुलीनाश्चेङ्गितज्ञाश्च कृतास्ते तात मन्त्रिणः।।''[8]

रामायण में कार्यकुशल, विनम्र, जितेन्द्रिय, पराक्रमी, राजकार्य में सावधान, राजा की आज्ञानुसार कार्य करने वाले, तेजस्वी, शास्त्रज्ञ, उचित परामर्श देने वाले, चरित्रवान् मन्त्रियों की चारित्रिक विशेषताओं का विशद् उल्लेख मिलता है।[9] राजा मन्त्रिमण्डल पर पूर्ण निर्भर रहता था तथा नीति का पालन न करने पर वह मन्त्रियों द्वारा रोकने के योग्य होता था–

''अमात्यैः कामवृत्तो हि राजा कापथमाश्रितः।''[10]

मन्त्री यदि अपने उक्त कर्त्तव्य का पालन नहीं करते हैं तो वह निन्दनीय है। मारीच रावण के मन्त्रियों की निन्दा करते हुए कहता है– ''रावण ! निश्चय ही तुम्हारे वे मन्त्री वध के योग्य है जो कुमार्ग पर आरूढ़ हुए तुम जैसे राजा को सब प्रकार से रोक नहीं रहे हैं''–

''वध्याः खलु न वध्यन्ते सचिवास्तव रावण।
ये त्वामुत्पथमारूढ़ं न निगृह्णन्ति सर्वशः।।''[11]

मन्त्री परामर्श देने के साथ ही युद्धनीति में भी कुशल होते थे। इस मन्त्रिमण्डल में पुरोहित का स्थान सर्वोच्च होता था तत्पश्चात् अन्य मन्त्रियों का महत्त्व था।

राज्य एवं प्रजा की सुरक्षा के लिए राजा के पास सुदृढ़ 'सैन्य बल' होता था। रामायण में अश्वारोही, रथारोही, गजारोही तथा पैदल सेनाओं का उल्लेख है। राम की सेना पैदल थी जबकि रावण की सेना पैदल, रथ, घोड़े तथा हाथी से युक्त थी। रामायण में इन सेनाओं का नेतृत्त्व करने वालों को सेनापति, अध्यक्ष, गुल्म कहा गया है। महर्षि वाल्मीकि ने उस युद्ध–कार्य को ही श्रेष्ठ माना है जो धर्म एवं नैतिकता की रक्षा हेतु लड़ा जाता है। युद्ध का उद्देश्य पीड़ितों की रक्षा तथा अधर्म का नाश करना है। राम द्वारा बालि तथा रावण का वध धर्म की अधर्म पर विजय का प्रतीक है। लोकाचार से भ्रष्ट होकर लोकविरुद्ध आचरण का पालन करने वाले बालि का वध करने के पश्चात् श्रीराम कहते हैं– ''मैं उत्तम कुल में उत्पन्न क्षत्रिय हूँ, अतः मैं तुम्हारे पापकर्म को क्षमा नहीं कर सकता। जो पुरुष अपनी कन्या, बहिन अथवा छोटे भाई की पत्नी के पास काम बुद्धि से जाता है, उसका वध करना ही उसके लिए उपयुक्त दण्ड है''–

''न च ते मर्षये पापं क्षत्रियोऽहं कुलोद्गत।
औरसी भगिनी वापि भार्या वाप्यनुजस्य यः।।
प्रचरेत नरः कामात् तस्य दण्डो वधः स्मृतः।''[12]

प्राचीन राजनीतिशास्त्रों में युद्ध के दो प्रकार धर्म युद्ध तथा अधर्म युद्ध का उल्लेख है। रामायण के अन्तर्गत वर्णित युद्ध धर्मयुद्ध है क्योंकि इसमें किया गया युद्ध क्षेत्रविस्तार अथवा शौर्य प्रदर्शन के लिए न होकर शरणागत की रक्षा अत्याचारियों से पीड़ित की रक्षा तथा प्रजा–कल्याण के लिए है। पुरुषोत्तम श्रीराम स्वयं कहते हैं– ''जो युद्ध न करता हो, छिपा हो, हाथ जोड़कर शरण में आया हो, ऐसे व्यक्ति को कभी नहीं मारना चाहिए''–

''अयुध्यमानं प्रचछन्नं प्रांजलिं शरणागतम्।
पलायमानं मत्तं वा न हन्तुं त्वमिहार्हसि।।''[13]

महर्षि वाल्मीकि ने 'उत्तरकाण्ड' में नीति एवं धर्म का पालन करने वाले राजा श्रीराम के राज्य की स्थिति का वर्णन इस प्रकार किया है– ''इनके राज्य में मेघ समय पर वर्षा करते थे। सदैव सुकाल ही रहता था, कभी अकाल नहीं पड़ता था। सम्पूर्ण दिशाएँ प्रसन्न दिखाई देती थी तथा नगर और जनपद हृष्ट–पुष्ट मनुष्यों से भरे रहते थे''–

''काले वर्षति पर्जन्यः सुभिक्षं विमला दिशः।
हृष्टपुष्टजनाकीर्ण पुरं जनपदास्तथा।।''[14]

श्रीराम पराक्रमी, दया से युक्त, प्रजाहितैषी, न्यायप्रिय राजा होने के साथ ही साथ आदर्श पुत्र, पति, भाई एवं मित्र भी थे।

रामायणयुगीन राजनैतिक व्यवस्था में राजा, मन्त्रिमण्डल तथा सेना तीनों धर्म तथा राज्य की रक्षा के लिए समन्वित होकर कार्य करते थे। राजा का सम्पूर्ण जीवन प्रजारŒजन के लिए समर्पित था। समाज में आदर्श एवं नैतिक मूल्यों की स्थापना हेतु राम का राज्य त्याग करना, भरत द्वारा राम की चरणपादुका को सिंहासन पर रखकर शासन करना आधुनिक शासकों एवं प्रशासकों के लिए उदाहरणस्वरूप है। वर्तमान में सत्तारूढ़ दल जनता के कल्याण के लिए बनायी गयी योजनाओं के धन का सुचारू रूप से प्रयोग न करके निजी स्वार्थों के लिए उसका दुरुपयोग कर रहे हैं जिसके कारण गरीबी, भुखमरी जैसी समस्याएँ उत्पन्न हुई। इन समस्याओं ने बालापराध, हिंसा, चोरी जैसे जघन्य अपराधों को जन्म दिया है। ऐसी परिस्थिति में यह आवश्यक है कि सभी राजनैतिक दल स्वार्थ रहित होकर रामायणयुगीन राजाओं के कर्त्तव्यों एवं प्रजाहितैषी कार्यों का अनुसरण करके राष्ट्र की उन्नति में योगदान में तभी रामराज्य की कल्पना साकार हो सकती है।

सन्दर्भ

1. श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण– 4.18.42– प्रकाशक– गीताप्रेस गोरखपुर, सं0 2067, अड़तीसवाँ पुनर्मुद्रण।
2. वा0रा0 – 2.67.34
3. वा0रा0 – 2.67.35
4. वा0रा0 – 2.2.15
5. वा0रा0 – 2.2.21, 22
6. वा0रा0 – 1.6.6
7. वा0रा0 – 4.18.61, 62, 63
8. वा0रा0 – 2.100.15, 16
9. वा0रा0 – 1.7.1 से 12 तक
10. वा0रा0 – 3.41.7
11. वा0रा0 – 3.41.6
12. वा0रा0 – 4.18.22, 23
13. वा0रा0 – 6.80.39
14. वा0रा0 – 7.99.13